फीके रियो सम्मेलन के बावजूद निशाने पर क्यों है ब्रिक्स

चंद्रभूषण

ब्रिक्स के रियो द जनीरो शिखर सम्मेलन के बारे में ग्लोबल राय यही है कि अतीत के ऐसे सारे आयोजनों की तुलना में यह सबसे फीका गया है। ऐसा किसी घटनावश या अचानक नहीं हुआ। रूसी राष्ट्रपति व्लादिमीर पूतिन और चीन के राष्ट्रपति शी चिनफिंग के इस आयोजन में शारीरिक रूप से न शामिल होने के फ़ैसले ने ही इसकी क़िस्मत लिख दी थी। इसके पीछे बहुत सारी वजहें हो सकती हैं। पश्चिमी मीडिया का ज़ोर इस बात पर है कि पूतिन तो रियो द जनीरो जा ही नहीं सकते थे क्योंकि वहां पहुंचते ही उनकी गिरफ़्तारी हो जाती। लेकिन यह सब कहने की बात है। पूतिन सब जगह जाते ही हैं। एक वजह रूस के कजान शहर में हुए पिछले ब्रिक्स सम्मेलन में ब्राजील के राष्ट्रपति लूला दा सिल्वा द्वारा ऐन मौक़े पर शामिल न होने की घोषणा से जुड़ी हो सकती है, लेकिन वह भी ज़रूरी नहीं है।

आसान व्याख्या एक ही लगती है कि रूस और चीन रियो द जनीरो ब्रिक्स शिखर सम्मेलन को कजान की तुलना में थोड़ा ठंडा ही रखना चाहते थे। ब्रिक्स के डी-डॉलराइजेशन या वैकल्पिक मुद्रा की चर्चा कजान सम्मेलन में काफ़ी आगे बढ़ गई थी। अमेरिका का राष्ट्रपति चुनाव उस समय ज़ोरों पर था और उस वक़्त अपने एक भाषण में डॉनल्ड ट्रंप ने कहा था कि ब्रिक्स देश अगर डॉलर को कमज़ोर करने का कोई भी क़दम उठाते हैं तो वे उनके ख़िलाफ़ 100 प्रतिशत आयात कर लगा देंगे। इससे मिलता-जुलता बयान उन्होंने इस बार भी दिया है, लेकिन सुर थोड़ा बदलकर इसे 'ब्रिक्स के अमेरिका विरोधी क़दमों में साथ देने वाले देशों पर 10 प्रतिशत कर लगाने' का बना दिया है।

सचाई यह है कि रियो सम्मेलन में भी नेताओं के भाषण काफ़ी ज़ोरदार रहे, लेकिन उनकी अंतर्वस्तु हवा-हवाई ही थी। ग्लोबल वॉर्मिंग रोकने के लिए विकसित देश अपने वादे के मुताबिक ग्लोबल साउथ के देशों को तकनीक और पूंजी नहीं दे रहे हैं, इसे लेकर कितना भी गर्जन-तर्जन कर लिया जाए लेकिन इसके लिए किसी को मजबूर तो नहीं किया जा सकता। आतंकवाद के मसले पर दोहरा रवैया नहीं चलेगा, उसे बढ़ावा देने वाले संगठनों पर कार्रवाई की जाए, उनकी आर्थिक नाकेबंदी की जाए, जो देश ऐसे संगठनों की शरणस्थली बने हुए हैं, उनके ख़िलाफ़ ऐक्शन लिया जाए, यह भी ठीक है। लेकिन इसके लिए संयुक्त राष्ट्र ने कुछ संस्थाएं पहले से बना रखी हैं। इससे आगे बढ़कर मक़सद अगर पाकिस्तान को बेनक़ाब करने का है तो अंतरराष्ट्रीय मंचों पर फिलहाल उसकी पौ-बारह हो रखी है।

कुल मिलाकर एक ही सख़्त प्रस्ताव ब्रिक्स के मंच से पारित हो पाया। वह था, अंतरराष्ट्रीय नियमों और परंपराओं का उल्लंघन करते हुए ईरान पर किए गए हमले की भर्त्सना। ईरान पिछले डेढ़ वर्षों से ब्रिक्स का पूर्ण सदस्य है और उसके ख़िलाफ़ हुए हमले का विरोध करना, इसकी निंदा करना ब्रिक्स के लिए लाज़मी था,हालांकि इस प्रस्ताव में अमेरिका और इजराइल का नाम नहीं लिया गया है। हाल में हुई शांघाई कोऑपरेशन ऑर्गनाइजेशन की बैठक में भारत ने ख़ुद को ऐसे ही एक प्रस्ताव से अलग कर लिया था, लेकिन रियो के प्रस्ताव के पीछे उसकी भी सहमति थी।

संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद की स्थायी समिति में ख़ुद को शामिल कराना भारत का पुराना एजेंडा रहा है। इस बार ब्रिक्स समिट ने संयुक्त राष्ट्र के सर्वोच्च निकाय के पुनर्गठन और वर्ल्ड बैंक, आईएमएफ आदि अंतरराष्ट्रीय वित्तीय संस्थाओं में ग्लोबल साउथ के देशों का प्रतिनिधित्व बेहतर बनाने के मुद्दे को अपने प्रस्ताव में जगह दे दी। ब्रिक्स ऐसे मुद्दे उठाने का मंच जरूर हो सकता है, लेकिन इसके गठन का उद्देश्य ज्यादा बड़ा है। ब्रिक्स निश्चित रूप से ग्लोबल साउथ का संगठन नहीं है। इससे ध्वनि सिर्फ़ यह निकलती है कि ब्रिक्स के तीन संस्थापकों- भारत, ब्राजील और दक्षिण अफ्रीका के हित उत्तर के बाकी दोनों संस्थापकों, रूस और चीन से अलग हैं। कोई सोच सकता है कि जैसे नॉन एलाइंड मूवमेंट और सार्क जैसे

मंच भारत की ही दुविधा से ख़त्म हुए, वैसा ही अब शायद ब्रिक्स के साथ भी हो।

ध्यान रहे, ब्रिक्स के पांच पुराने सदस्य देशों भारत, चीन, रूस, ब्राजील और दक्षिण अफ्रीका के अलावा पांच देश- ईरान, इथियोपिया, इजिप्ट, इंडोनेशिया और संयुक्त अरब अमीरात पिछले साल ही इसके सदस्य बने थे। सऊदी अरब ने भी सदस्यता से सहमति जता दी है, लेकिन संगठन से जुड़ाव को संस्थागत रूप अभी नहीं दिया है। इनके अलावा दस देशों- बेलारूस, कजाखस्तान, उज्बेकिस्तान, क्यूबा, बोलीविया, मलयेशिया, थाईलैंड, विएतनाम, नाइजीरिया और यूगांडा को ब्रिक्स की ओर से रणनीतिक भागीदार देश का दर्जा दिया गया है। बहुत सारे अन्य देशों की भी ब्रिक्स के मंच में काफ़ी रुचि है और उन्हें धीरे-धीरे ही अपने साथ जोड़ने की नीति इस संगठन ने अपना रखी है। कूटनीतिज्ञ इसमें गुटनिरपेक्ष आंदोलन जैसी झलक देख रहे हैं।

दिलचस्प बात यह है कि डी-डॉलराइजेशन, यानी आपस का व्यापार डॉलर के बजाय स्वर्ण समर्थित डिजिटल मुद्रा में करने के मुद्दे पर कजान शिखर सम्मेलन से अलग ट्रैजेक्ट्री बनाने की कोशिश में रियो शिखर सम्मेलन ने जो शाकाहारी रास्ता पकड़कर चलने की कोशिश की है, अमेरिकी राष्ट्रपति डॉनल्ड ट्रंप ने सिरे से उसकी अनदेखी करते हुए सम्मेलन समाप्त होने के साथ ही उस पर एक जबर्दस्त हथौड़ा मार दिया। 'ब्रिक्स की अमेरिका विरोधी नीतियां' क्या हैं, यह स्पष्ट किए बग़ैर इनका साथ देने वाले सभी देशों से अमेरिका को होने वाले आयात पर 10 प्रतिशत अतिरिक्त कर लगाने की घोषणा करके उन्होंने यह साफ़ कर दिया कि ब्रिक्स के सदस्य देश चाहे कड़ा बोलें या नरम, आने वाले दिनों में दुनिया की सबसे तीखी गोलबंदी 'अमेरिका बनाम ब्रिक्स' की ही होने वाली है।

एक और मज़ेदार पहलू यह कि चीन और रूस की ओर से ट्रंप के बयान के तुरंत बाद यह सफ़ाई आई कि ब्रिक्स का मक़सद किसी देश को आर्थिक या किसी भी तरह की क्षति पहुंचाना नहीं है। लेकिन भारत की ओर से इस बारे में सन्नाटा ही खिंचा रहा। दरअसल, भारत के लिए ब्रिक्स के बचाव में कुछ कहने की कोई वजह भी नहीं बनती थी।

जब घरेलू मोर्चे पर ही अपनी निरंतर नरमी का कोई फ़ायदा नहीं निकल रहा तो किसी मंच का प्रतिनिधि बनकर कुछ भी बोलने का क्या मतलब होता? भारत की ओर से लगातार ट्रंप प्रशासन से अच्छा रिश्ता बनाए रखने के बावजूद ट्रंप के आक्रामक बयान भारत के ख़िलाफ़ आते ही जा रहे हैं। भारत और पाकिस्तान का सैन्य टकराव उनकी ही कोशिशों से समाप्त हुआ, ऐसा वे भारत की समझाइश के बावजूद बार-बार कह रहे हैं। दूसरी बात, भारत द्वारा अमेरिकी सामानों पर लगाए जाने वाले कर को वे ऐसे पेश कर रहे हैं जैसे अभी तक भारत पिस्तौल दिखाकर अमेरिका को लूटता आया हो। सचाई यह है कि विकासशील देशों के उद्योगों और कृषि को संरक्षण देने के लिए यह ज़रूरी है और इसके बदले में भारत ने अमेरिकी संस्थाओं के लिए अपना पूंजी बाज़ार और सेवा क्षेत्र खोल रखा है।

ग्लोबलाइजेशन के नाम पर पिछले तीस वर्षों में अमेरिका ने दुनिया से बेतहाशा उगाही की है और आगे और ज़्यादा लूटपाट की योजना बना रहा है। इसके ख़िलाफ़ मंच बांधकर बोलने और कुछ शर्तें मनवा लेने की भूमिका कमज़ोर मुल्कों के लिए आने वाले दिनों में ब्रिक्स ही निभा सकता है। ऐसे में ट्रंप इसको हमेशा औक़ात में ही रखना चाहेंगे।

अमेरिकी कंपनियां हज़ार रास्तों से बैठे-बिठाए दुनिया के कोने-कोने से कमाई कर रही हैं। उनमें एक-एक की आर्थिक हैसियत अभी दुनिया की बड़ी अर्थव्यवस्थाओं जैसी हो गई है। अफ्रीका के किसी सुदूर लैंड-लॉक्ड सूखे मुल्क में भी मेहनत-मजूरी करने वाला कोई इंसान हर महीने कुछ पैसे एंड्रॉयड-माइक्रोसॉफ्ट के ऑपरेटिंग सिस्टम के लिए, कुछ फेसबुक, वॉट्सऐप, इंस्टाग्राम, ट्विटर जैसे सोशल मीडिया के लिए या गूगल सर्च, ओपेन एआई के लिए, या मोबाइल फोन के किसी नेटवर्क के लिए, या फिर अमेजन-नेटफ्लिक्स के कनेक्शन के लिए दे रहा है।

इक्का-दुक्का अपवादों को छोड़ दें तो उसकी कमाई में इससे एक पैसे की वृद्धि नहीं हो रही है, न ही उसके बच्चों को पढ़ाई-लिखाई का फ़ायदा मिल रहा है। बस, जैसे-तैसे करके एक माहौल रच दिया गया है, जिसके चलते जो चीज़ें या सेवाएं किसी की ज़रूरत में दूर-दूर तक शामिल नहीं थीं, उनके बिना आज लोगों का समय नहीं कटता।

यूरोप वालों ने इन कंपनियों को होने वाली विज्ञापन की आमदनी में हिस्सा बंटाने का रास्ता अपनाया और इसके लिए उन्हें मजबूर कर दिया। चीनियों ने पिछले पंद्रह सालों में इनकी तरफ़ देखना ही बंद कर दिया और अपने ही प्रॉडक्ट और

नेटवर्क इनसे बेहतर बना डाले। लेकिन दुनिया की एक बहुत बड़ी आबादी के लिए अमेरिका अभी सिर्फ़ डिजिटल अफीम बना रहा है और आगे क्वांटम कंप्यूटर के विकास तथा क्वांटम एआई की खोज के क्रम में इसे और ऊंचे पैमाने पर ले जाना चाहता है। इसका विकल्प खड़ा करना तो दूर, इनकी आमदनी में साझे की मांग भी कोई देश नहीं कर पाता, क्योंकि ज्यादातर देशों का पूंजी बाजार आज भी अमेरिकी पूंजी पर बुरी तरह निर्भर करता है।

ब्रिक्स को लेकर अमेरिका में इतना खौफ़ इसलिए है, क्योंकि इसके दस सदस्य देश मिलाकर दुनिया के 42 प्रतिशत तेल का उत्पादन करते हैं। साढ़े तीन अरब,यानी दुनिया की लगभग आधी आबादी उनके पास है और वे लगभग 35 प्रतिशत ग्लोबल जीडीपी का प्रतिनिधित्व करते हैं। ऐसे में आपस का व्यापार वे डॉलर के बिना भी टिका ले जाएंगे। लेकिन ब्रिक्स के कुछ भीतरी तनाव भी हैं। चीन के स्वाभाविक दबदबे वाले इस खेमे का अभिन्न अंग बनकर भारत नहीं रह पाएगा। न ही ईरान से नज़दीकी बनाए रखना संयुक्त अरब अमीरात के लिए बहुत आसान होने वाला है। लेकिन डॉलर के इर्दगिर्द घूम रही विश्व वित्तीय व्यवस्था अंततः एक छलावा है। 2008 में हमने इसे बिखरते देखा है। ब्रिक्स के पीछे-पीछे दुनिया के बड़े हिस्से को डॉलर का सहारा लिए बिना खड़ा होना देर-सबेर सीखना ही होगा।

(लेखक चर्चित कवि और विचारक हैं)